पक्षधर

38

पक्षधर

अंक

38

जनवरी-जून, 2025

संस्थापक संपादक : दूधनाथ सिंह

पक्षधर

प्रतिरोध की संस्कृति का रचनात्मक हस्तक्षेप

वर्ष : 19 अंक : 38 जनवरी-जून, 2025

संपादक

विनोद तिवारी

पक्षधरता का संबंध मनुष्य के विश्वबोध और सद्-असद् विवेक-बुद्धि अर्थात् अंतरात्मा के विवेक से है।

अक्षर संयोजन
कम्प्यूटेक सिस्टम
ई-17, पंचशील गार्डन, नवीन शाहदरा, दिल्ली-32

आवरण चित्र : अभिषेक प्रताप सिंह

मूल्य :
एक प्रति : ₹ 200 (व्यक्तिगत) ₹ 250 (संस्थागत)
सदस्यता :
वार्षिक (व्यक्तिगत) : ₹ 500 (डाक खर्च सहित)
वार्षिक (संस्थागत) : ₹ 600 (डाक खर्च सहित)
पंचवार्षिक : ₹ 3000
आजीवन : ₹ 10000
विदेश के लिए : $ 100 (वार्षिक)

भुगतान हेतु बैंक-खाता विवरण :
A/c Name / No. : Pakshdhar / 31266280438
Bank : SBI / IFSC-SBIN0001067

संपादन/प्रकाशन : अवैतनिक/अव्यावसायिक

स्वामी-संपादक-प्रकाशक-मुद्रक ***विनोद तिवारी, सी-4/604, ऑलिव काउंटी, सेक्टर-5, वसुंधरा, गाजियाबाद-201012*** के लिए बी.के. ऑफसेट, एफ-93, पंचशील गार्डन, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032 से प्रकाशित और मुद्रित।

प्रकाशित रचनाओं की रीति-नीति या विचारों से संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। संपादक और लेखक की अनुमति के बिना प्रकाशित सामग्री के किसी भी तरह के उपयोग की अनुमति नहीं होगी।

सम्पर्क :

सी-4/604, ऑलिव काउंटी, सेक्टर-5,
वसुंधरा, गाज़ियाबाद-201012
मो. 9560236569
ई-मेल : pakshdharwarta@gmail.com
वेब पता : www.pakshdhar.com

PAKSHDHAR **: ISSN :** 2231-1173
A Bi-Annual Literary Magazine
Editor : Vinod Tiwari
Language : Hindi

अनुक्रम

संपादकीय

प्रेमचंद का चन्दन-तिलक 5

एक कवि : एक राग

दस कविताएँ : **लीलाधर मंडलोई** 13

व्याख्यान

संविधान, संविधानवाद और आंबेडकर : **कँवल भारती** 25

लेख

रचना और आलोचना के अन्तःसम्बन्ध : भारतीय परम्परा का पक्ष : **राधावल्लभ त्रिपाठी** 35

रूढ़िवादी दिमाग़ कैसे काम करता है? : **रवि श्रीवास्तव** 49

आंडाल : एक विलक्षण कवि : **सुभाष राय** 62

हिंदी की सार्वजनिक दुनिया : राष्ट्र, भाषा और सत्ता की जटिलता (1900-1940) : **अविनाश कुमार** 75

दर्शन

दर्शन की प्रासंगिकता : **आनंद के. कुमारस्वामी** 106
(अंग्रेजी से अनुवाद : देवराज)

लंबी कविता

एक शव का शोकगीत : **केतन यादव** 123

कहानियाँ

झूठे नैना बोले साँची बतिया : **रणेंद्र** 134

काली भउजी : **ऋषि गजपाल** 142

स्थापत्य : **राहुल सिंह** 154

जूरी बाबा : **राजेन्द्र सजल** 161

कविताएँ

छह कविताएँ : **आर. चेतनक्रान्ति** 175

आठ कविताएँ : **विहाग वैभव** 181

दस कविताएँ : **सौम्य मालवीय** 193

पाँच कविताएँ : **ज्योति रीता** 204

बाहरी दुनिया

मिलेना के नाम काफ्का के पत्र : **फ्रांज़ काफ्का** 211
(टिप्पणी और अनु. : हरिमोहन शर्मा)

समीक्षाएँ

कठिन समय में जीवन-सौन्दर्य और संघर्षशीलता : **कैलाश बनवासी** 226

समय के आईने में समानांतर समय को रचने का जादू : **प्रियम अंकित** 233

कवि विद्रोही की विद्रोही शख़्सियत से रू-ब-रू कराती किताब : **लक्ष्मण यादव** 239

धोरों में गुँथे जीवन से उपजी कविता : **विशाल विक्रम सिंह** 244

प्रेमचंद का चन्दन-तिलक

दो-ढाई दशक पूर्व प्रेमचंद को दलित विरोधी और ब्राह्मणवाद का समर्थक लेखक कहने और उनका विरोध करने वाले दलित लेखकों का एक समूह हुआ करता था, उनमें से कुछ लोग आज भी यदा-कदा ज़ोर मारते रहते हैं। अब इधर एक नयी प्रवृत्ति देखने में आई है कि एक ख़ास काट के 'संस्कृतिवाद' के पोषक और प्रचारक अपने ब्राह्मणवादी-पुरोहितवादी एजेंडे के भीतर प्रेमचंद के समाहितीकरण का यज्ञकर्म कर रहे हैं। देखा जाए तो उक्त दोनों में बहुत फ़र्क़ नहीं है। एक वर्ग जहाँ हवन और दहन में विश्वास करता है, तो दूसरा यज्ञ और शुद्धिकरण में। पर, इनके ऋत्विक और यजमान यकसां हैं। परिप्रेक्ष्य भी यकसां कि प्रेमचंद ब्राह्मणवाद के पोषक हैं, हाँ उद्देश्य भले ही जुदा-जुदा हैं। पर, प्रेमचंद हैं कि अपने लेखन के बल पर बार-बार, हर बार इस तरह के प्रपंच को मुँह बिराकर, उसी ज़मीन पर खड़े मिलते हैं, जिस पर वह 1936 में दृढ़ता के साथ खड़े थे—गोदान, कफ़न, साहित्य का उद्देश्य और महाजनी सभ्यता की पुख्ता ज़मीन पर। इस ज़मीन का आरंभिक छोर 1905 के आसपास जाता है। वहाँ से लेकर 1936 तक प्रेमचंद ने 30-31सालों का सफ़र तय किया। इस सफ़र में एकाधिक मोड़ देखने को मिलते हैं, पर पड़ाव ही के रूप में, गंतव्य उनका समाजवादी मानववाद ही था। वह 'एकात्म मानववाद' बिल्कुल नहीं था, जिसकी पूजा और जिसका गुणगान उपर्युक्त 'संस्कृतिवादी' दल और विचार के लोग करते हैं। पंडित दीनदयाल उपाध्याय का 'एकात्म मानववाद' धर्म को निजी आस्था के विषय के रूप में नहीं, बल्कि एक सामाजिक व्यवस्था के रूप में देखता है। भारतीय संविधान में जहाँ जनता की ताक़त (भारत के लोग) को संप्रभु माना गया है, वहीं 'एकात्म मानववाद' में धर्म को वह संप्रभुता प्रदान की गयी है। इसलिए सीधे तौर पर न सही, किन्तु परोक्ष रूप से यह सिद्धान्त धर्मराज्य का समर्थन करने वाला सिद्धान्त है। मार्च, 1933 का प्रेमचंद का एक भाषण है—'साहित्य की प्रगति'। उस भाषण में प्रेमचंद कहते हैं कि "ईश्वर का ज़िक्र बड़े मौके से आ गया। साहित्य की नवीन प्रगति उनसे विमुख हो रही है। ईश्वर के नाम पर उनके उपासकों ने भू-मण्डल पर जो अनर्थ किए हैं, कर रहे हैं, उनके देखते इस विद्रोह को बहुत पहले उठ खड़ा होना चाहिए था। आदमियों को रहने के लिए शहरों में स्थान नहीं, मगर ईश्वर और उनके मित्रों और कर्मचारियों के लिए बड़े-बड़े